अंक- 9
फरवरी, 2024

# ये शब-गज़ीदा सहर

## इतिहास: कल्पना या यथार्थ

वीथिका ई पत्रिका

संस्कृति, साहित्य, कला, विज्ञान को समर्पित

WWW.VITHIKA.ORG

वीथिका ई पत्रिका

# संपादक मंडल


**अर्चना उपाध्याय**
**प्रधान संपादक**

**चित्रा मोहन**
**मुख्य सलाहकार संपादक**

**सुमित उपाध्याय**
**प्रबंध संपादक**

वीथिका परिवार

संरक्षक समिति
प्रो. विनय मिश्र
प्रो. प्रभाकर सिंह
डॉ. बिपिन कुमार मिश्र

वरिष्ठ सलाहकार संपादक
डॉ. आशुतोष तिवारी

वरिष्ठ सह संपादक
डॉ. सुधांशु लाल

**वेब डिज़ाइन**
**रोशन भारती**

**प्रकाशक**
**उज्जवल उपाध्याय**
**यशिका फाउंडेशन, मऊ**

**संपादकीय समिति**

**डॉ मोहम्मद ज़ियाउल्लाह**
**डॉ अरुण कुमार सिंह**
**डॉ धनञ्जय शर्मा**
**श्री मनोज कुमार सिंह**
**एड. सत्यप्रकाश सिंह**
**श्री बृजेश गिरि**
**श्री नन्दलाल शर्मा**

**कवर पेज संपादक**
**अर्चिता उपाध्याय**

**कार्टून संपादक**
**कृतिका सिंह**

**सलाहकार परिषद**
**डॉ अखिलेश पाण्डेय**
**डॉ शिवमूरत यादव**



**UDYAM-UP 55 0010534**

**vithikaportal@gmail.com**

www.vithika.org

वीथिका ई -पत्रिका



**पत्रिका में छपे सभी लेख**
**लेखक के अपने विचार हैं**

# आपकी वीथिका

अंक 09

फरवरी , 2024

गलियों की बात — सम्पादकीय — 04

इतिहास:
कल्पना या यथार्थ — डॉ मो. ज़ियाउल्लाह — 05

ब्रिटिश काल में शोषण से जूझता उत्तर प्रदेश का कृषक — डॉ० अरुण कुमार सिंह — 08

नाटक:
किस्सा गंगा जमुनी मुहल्ले का — चित्रा मोहन — 12

महाप्राण निराला — सुमित उपाध्याय — 16

पुस्तक समीक्षा :
नाहीं लउके डहरिया के छोर — डॉ धनञ्जय शर्मा — 20

हरखु भैया — अनु — 23

भूटान यात्रा : संस्मरण — डॉ. नमिता राकेश — 24

सोंधी मिट्टी — 26
डॉ एस पी सती, मनोज सिंह, अनिल कुमार केसरी, अश्वनी अकल्पित

लघुकथा :
नाराज़गी और प्यार — शायरा बानो — 30

# गलियों की बात

फरवरी, 2024

**अर्चना उपाध्याय**
प्रधान संपादक

बसंत ऋतु का आना अर्थात प्रकृति का झूम उठना, हरियाली का उत्सव,पीले रंगों से समृद्ध बसंत जीवंत कर देता है सम्पूर्ण वातावरण को। उल्लसित हो जाता है तन-मन । श्रीकृष्ण ने गीता में स्वयं को "ऋतुओं में बसंत" कहा है अर्थात इस ऋतु में प्राणी से लेकर धरा तक मानो असीम नैसर्गिक उर्जा के साथ नवीनीकरण के लिए तैयार हो उठते हैं।

साहित्यकारों व कवियों ने तो अपने अथाह ज्ञान की विशालता से हर पगडन्डी, सड़क-गली-कूचे, घर, गांव, कस्बे को जैसे महकाया है वैसे ही श्रृतुओं के राजा बसंत पर इनकी रचना जीवंत कर देती है।पीले रंग को भी बसंत से जोड़ा गया है जिसका अर्थ है समृद्धि ।

तो ऐसे ही जहां ज्ञान की समृद्धि हो वहां तो बसंत अपने सम्पूर्ण यौवन पर होगा ही अर्थात विविध क्षेत्रो के महारथियों ने आपकी अपनी" वीथिका" को "ज्ञान के बसंत" से सजाया है ।

# इतिहास : कल्पना या यथार्थ

डॉ मोहम्मद ज़ियाउल्लाह
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
डी.सी.एस.के. महाविद्यालय, मऊ

हम भी, आप भी, माना जाए तो इस व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी के कृतज्ञ हैं। याद करिए, एक जमाना था जब हम बेबस थे, हम केवल सच और तथ्य के साथ जीते थे, जितने तथ्य उपलब्ध थे उतने पर ही संतोष करना पड़ता था, हम चाह कर भी अपनी मर्जी के तथ्य नहीं गढ़ पाते थे। मगर आज यह व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी की देन है कि हम जब चाहते हैं और जैसा चाहते हैं, यह विश्वविद्यालय वैसा ही तथ्य पैदा करके हमें दे देता है। यूँ कहिए कि इस विश्वविद्यालय ने “आवश्यकता अविष्कार की जननी है” की कहावत को सच कर दिखाया है ।

इतना ही नहीं इस विश्वविद्यालय की असीम संभावनाएं हैं । यही एक मात्र विश्वविद्यालय है जिसमें सबसे अधिक समानता हैं, सबको बराबर अवसर प्राप्त हैं, साक्षर क्या निरक्षर सभी एक समान इस विश्वविद्यालय में ज्ञान की डुबकी लगाते हैं । इस विश्वविद्यालय में जीवन के हर एक क्षेत्र के ज्ञान बंटते हैं, मगर इतिहास इस विश्वविद्यालय का सबसे रोचक विषय रहा है। नेता-प्रणेता अपने रंगमंच पर जो.इतिहास की अपनी डपली-अपना राग सुना रहे थे व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी के अभ्योदय के साथ ही उनका पेटेन्ट समाप्त हो जाता है।

इस विश्वविद्यालय ने जो ऐतिहासिक ज्ञान बांटा कि अब हालत यह हो गयी कि "जितने मुहं-उतने इतिहास" । एक ने बात गढ़ी, दुसरे ने वायरल किया और जमाने का हर व्यक्ति इतिहासकार हो गया । व्हाट्सएप इतिहास लिखने के लिए इन्हें किसी बात या साक्ष्य.की आवश्यकता नहीं वह स्वयं में साक्ष्य होते हैं। नेहरू के दादा गंगाधर नेहरु को मरणोपरांत परान्त गयासबेग बनाने की अदभूत कला रखते हैं। अगर व्हाट्सएप यूनिवर्सिटी नहीं होती तो हम ऐसी अदभूत सूचना से वंचित रह जाते ।

एक इतिहास, जो है तो इतिहास क्योंकि वह साक्ष्यों पर आधारित है और स्रोतों से प्रमाणित है परन्तु अधिकतर लोग इतिहास को राजा-महाराजाओं की कहानी तक सीमित समझते हैं । इतिहास राजाओं की नीतियों, उनके युद्ध और संधियों का वर्णन होता है। इतिहासकार गड़े मुर्दे उखाड़ते हैं। भूतकाल में जाकर भूतों पर नियन्त्रण करने का प्रयास करते हैं।

इतिहास में धर्म-कर्म का रंग चढ़ा हुआ भी देखा गया है। यह वही समय है जब पंडितों-पुजारियों, पादरियों और मौलवियो-मुल्लाओं को राज्य दरबार में पैर पसारते देखा जा सकता है। राज-पाट के साथ-साथ धर्मगुरु (Grandies of the State and Religion) भी इतिहास के विषय बन गए अर्थात इतिहास का दायरा बढ़ा । परन्तु अब भी इस दायरे में प्रजा शामिल नहीं हो सकी। आधुनिक दौर में इतिहास का दायरा प्रजा और उसके जीवन से संबन्धित विषयों तक बढाया गया । इतिहास में प्रजा को उसकी दैनिक स्थिति के रुप में प्रस्तुत सबॉल्टर्न इतिहासकार ने किया। इस प्रकार मार्क्सवादी इतिहासकार ने इतिहास को भौतिक दृष्टि से प्रस्तुत किया। राष्ट्रवादी एवं साम्राज्यवादी दृष्टि से इतिहास को लिखा गया।

इतिहास के सफर में यह जानना भी जरूरी है कि धरती पर मनुष्य का इतिहास, उसकी उत्पत्ति तथा उपलब्धि से सम्बंधित है । बीते कल से अनादिकाल तक का इतिहास होता है मगर हमारे पास इस काल के लिए जिन्दा माध्यम मौजूद नहीं हो सकता। इसीलिए इतिहासकारों ने भूत को जानने-समझने के लिए स्त्रोतों की खोज की ताकि असल स्थिति का सही ज्ञान प्राप्त हो सके। इसके लिए इतिहासकारों ने प्रथम दृष्टया इतिहास को तीन कालों – प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक काल में विभाजित किया ताकि इसे सही स्त्रोतों के आधार पर लिखा और समझा जा सके।

जिस प्रकार डॉक्टर के लिए नवजात शिशु की बीमारी समझना और उसका उपचार करना अनिवार्य है, आप समझ सकते हैं कि शिशु अपना दुःख नहीं बता सकता मगर फिर भी उसका उपचार तो किया जाना है । इसमें असल होशियारी डॉक्टर की है कि वह बीमारी को लक्षणों से समझता है, जांचों से पड़ताल करता है और अनुमान से इलाज कर ही लेता है । यही है हमारे प्राचीन कालीन इतिहास की हालत, यह भी मानव विकास का शिशु काल ही है जिस पर ज्ञान की वाणी मौन है

इतिहास लेखन के इस बेला में हमारे लिए धार्मिक ग्रंथ ही असल Symptoms हैं जिससे इतिहास का अनुमान लगाया जाता है जबकि पुरातात्विक अवशेष से जाँच पड़ताल किया जाता है । मुश्किल यह है कि धार्मिक ग्रंथ अथाह हैं उसमें से इतिहास निकालना रेत से पानी निचोड़ने के समान हैं। मगर हम इतिहासकार हैं कि है चारों वेद - ऋग, साम, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद, इनके 6 वेदांग, 200 उपनिषद, 18 पुराण, हर 7 आरण्यक, 8 स्मृति, रामायण, महाभारत, अथाह जैन धर्म ग्रंथ, 12 अंग, 12 उपांग, 10 प्रकीर्ण ग्रंथ, 6 छेद ग्रंथ, 4 मूल सूत्र, 2 स्वतंत्र ग्रंथ, बौद्ध त्रिपिटक, विनयपिटक, अभिधम्म, सूत्रपिटक, जातक कहानियाँ, जैसे इन धार्मिक ग्रंथों के अथाह सागर में डुबकी लगाकर मोती निकाल ही लेते हैं ।

बच्चे जब थोड़ा बड़े हो जाते हैं तो अपनी मासूमियत से दुनिया को वैसा ही देखते है जैसी उन्हें दिखाई देती है। इतिहास के विदेशी यात्री - मेगास्थनीज, डाईमेक्स,डायनोसियस, टॉलमी, प्लिन्नी, फाह्यान, शुग-यान, ह्वेनसांग सुलैमान, अल-मसूदी में भारत देखने-परखने में वही बच्चों की नज़र वाली

मासूमियत थी कि जैसा समझा वैसा ही प्रस्तुत कर दिया। हम इतिहासकारों को इनमें से हीरे चुन-चुन कर तराशना पड़ता है ।

इतिहास में हमारी जांच ऊँचे-ऊँचे टीलों से शुरू होती है। इतिहास और सभ्यताओं की खोज में हमने ढूंढ़-ढूंढ़ कर टीलों की खुदाई किया। फिर टीलों में आसमान की ऊँचाई पर विराजमान सिन्धु घाटी की सभ्यता ने दर्शन दिया । मिस्र और मेसोपोटामिया ने बुलन्दी दिखाई और इधर-उधर बिखरी सैकड़ों संस्कृतियां अपना-अपना गौरव प्रस्तुत करने लगीं। पुरातात्विक खोज ने चामत्कारिक रूप से मानव अवशेष का खजाना प्रदान कर दिया, अनगिनत शहर-भवन, स्मारक, मूर्तियां, मुद्राएँ, अभिलेख, शीलालेख, स्तंभलेखों ने सारी परिकल्पनाओं को साकार कर कर दिया। इतिहास की किस्से कहानियो का बादल घंटा सभ्यता संस्कृति ने मनुष्य को दुनिया का बेताज बादशाह साबित किया।

बच्चा बड़ा हुआ अपना दर्द खुद बयान करने में सक्षम हुआ। डाक्टर से संवाद संभव हुआ। इसी तरह मध्य युग में ज्ञान का सूयोदय हो चुका था। साहित्य धर्म से उपर उठकर जीवन के दर्द को बयान कर रहा था। ज्ञान, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, जीवन के दर्शन एवं व्यवहार का साहित्य लिखे जाने लगे थे । इतिहासकार के लिए अब भूत और वर्तमान में संवाद स्थापित करना आसान हो रहा था। प्रजा हो कि राजा अपने-अपने दैनिक जीवन का हिसाब लिख कर देने लगे थे। आधुनिक युग में बच्चा इतना बड़ा, इतना समझदार, जमाने की उलझनों में इतना पड़ा कि अपना मर्ज इतना बताने लगा कि डाक्टर को बातों में असल को चुन कर इलाज करना पड़ता है। उसी प्रकार इस युग में इतिहास के स्त्रोतों का अंबार लग चूका है रोज-रोज के समाचार पत्र, पत्रिकाएं, किताबें, सरकारी व गैर सरकारी आंकड़े, विश्लेषण, और भी बहुत कुछ "इलेक्ट्रानिक क्रांति के युग में सब प्रस्तुत हैं । अब इतिहास विषयानुसार छांट-छांट कर लिखना है। इतिहास के इस सफर में स्त्रोत और विषय ने जीवन के सभी क्षेत्रों को इस तरह समेटा कि अब इतिहास गड़े मुर्दे उखाड़ना नहीं बल्कि जीवन के सभी क्षेत्रों को अपने अंदर संजोये हुए भविष्य का निर्माण करता आगे बढ़ रहा है ।

# ब्रिटिश काल में शोषण से जूझता उत्तर प्रदेश का कृषक

**डॉ० अरुण कुमार सिंह**

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग,
डी०ए०वी० पी०जी० कालेज,
आजमगढ़

हमारे समाज में कृषि एक समय उत्तम व्यवसाय मानी जाती थी पर समय के साथ परिस्थिति बदली और मध्यकाल के अंत में मुगलों की जागीरदारी, जमींदारी और राजस्व नीति के अलावा मराठों की वसूली इत्यादि कारणों से किसानों की दशा में निरंतर गिरावट आने लगी। इस दौर के बाद जब भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का पदार्पण कृषि राजस्व के वसूली क्षेत्र में हुआ तब से अंग्रेजी शासन काल तक किसानों की दशा में निरंतर ह्रास हुआ तथा ये दलित वर्ग में सम्मिलित हो गये। जब शोषण एवं अत्याचार की पराकाष्ठा सहन सीमा से बाहर होने लगी तो किसानों ने भी अंग्रेजी सत्ता और उनके पालित जमींदारों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। इन परिस्थितियों ने अलग-अलग क्षेत्र में अलग-अलग किसान संगठनों को जन्म दिया । इस सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश में किसान संगठनों की विशेष भूमिका रही, क्योंकि यहाँ के किसानों के संघर्षों के परिणामस्वरूप अखिल भारतीय किसान संगठन अस्तित्त्व में आये और किसानों के हित के लिए आंदोलन को एक नयी दिशा मिली । इससे किसानों में न केवल अपने अधिकार के प्रति जागरूकता आयी, बल्कि संघर्ष के लिए संगठन के महत्त्व को भी ये समझने लगे।

सर्वप्रथम कांग्रेस किसान समस्याओं के समाधान हेतु आगे बढ़ी । कांग्रेस एक राजनीतिक संस्था थी, जिसका मुख्य ध्येय देश की आजादी थी, किन्तु इस देश के किसानों की दुर्दशा से मुक्ति की लड़ाई को भी वह अपने मुद्दों में सम्मिलित करती रही । कांग्रेस के झंडे के नीचे ही महात्मा गाँधी ने सर्वप्रथम नील आन्दोलन की सफल लड़ाई लड़ी, इसी तरह कांग्रेसी नेता सरदार पटेल ने बारदोली आन्दोलन लड़ी और इन्हीं कड़ियों में अन्ततः प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने ही आजादी के तत्काल बाद जमींदारी प्रथा को समाप्त करने में अहम् भूमिका निभाई।

औपनिवेशिक काल में किसानों की समस्याएं अनंत थीं। हम उदहारण स्वरुप सबसे कठोर समस्या नजराना प्रथा को लें । नजराना प्रथा से किसान बहुत डरते थे, क्योंकि जमींदार कब किस नजराने की माँग कर दे।

इस प्रथा के तहत प्रताड़ना का आलम यह था की एक बार जनपद प्रतापगढ़ के तालुकेदार की बहन के गाँव 'गुजारा' का बंसपती नामक काश्तकार भूस्वामी की बदतमीजी एवं नीच हरकतों से परेशान होकर जब अदालत पहुँचा, तो अदालती कार्यवाही से इस कदर बौखलाया कि अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठा। अदालत को उसे पागलखाने भेजना पड़ा, जहाँ *9* महीने तक उसका इलाज चला।

किसानों से अमानवीय व्यवहार का एक और ढंग मुर्दाफरोशी कानून था। इसके तहत किसी काश्तकार की मृत्यु होने पर भूमि से उसके वारिस को बेदखल कर जमींन को खुलेआम बोली लगाकर ऊँची दर की लगान पर दूसरे काश्तकार को दे दी जाती थी। 'अवध रेन्ट एक्ट' की धारा *48* के अनुसार भू-स्वामियों को यह अधिकार प्राप्त था कि सात वर्षीय पट्टे की समय-सीमा पूर्ण होने पर मृत काश्तकार के वारिस को भू-स्वामी बेदखल कर सकता था। किन्तु वे *07* वर्ष पूरा होने का इंतजार नहीं करते थे। परिवार को सहारा देने वाले व्यक्ति की मौत पर जाहिल जमींदार के कारिन्दे व गाँववाले मृतक के अंतिम संस्कार के पूर्व ही उसके जमीन की सौदेबाजी में व्यस्त हो जाते थे। एक काश्तकार ने वी.एन. मेहता के समक्ष बयान देते हुए कहा था, "यह एक नये किस्म का महाब्राह्मण वजूद में आ गया है । जिसे चिता की राख ठण्डी होने से पहले सन्तुष्ट करना पड़ता है।"

उस काल-अवधी में कृषि जीवन आपदाओं की सुनामी से जूझता सा दीखता है । प्राकृतिक आपदा से किसी काश्तकार का मकान गिर जाता था तो उसके पुनर्निर्माण की इजाजत के लिए भू-मी नजर वसूल करते थे। इसी तरह काश्तकारों द्वारा 'कर' अदा करने में एवं 'रकमसेवाई' में विलम्ब करने पर भी जुर्माना वसूला जाता था। किसी काश्तकार द्वारा नई झोपड़ी लगाने पर अथवा पेड़-पौधा लगाने पर काश्तकार को 'नजर' देनी पड़ती थी, यदि किसान इससे मना करता तो बगीचों वाली जमीन को 'नाजूल' भूमि *(*सरकारी भूमि*)* घोषित करने की धमकी दी जाती थी।

काश्तकारों को भूस्वामी के यहाँ शादी या अन्य उत्सवों के अवसर पर अनिवार्य रूप से 'न्यौते' रकम देनी पड़ती थी। भूस्वामियों द्वारा किसानों से बाजार भाव से सस्ते दामों पर अनाज, घी इत्यादि खरीदा जाता था। भूस्वामी जानवरों को चराने के

बदले 'चराई कर' वसूलते थे। इस कर की उगाही भूस्वामी अनेक चालाकियों व धूर्तता के सहारे करता था, जैसे -अधिकांशतः जमींदार गाँव की सारी परती जमीन को रख' या आरक्षित जमीन में बदल देता था, यदि उस जमीन पर किसी जानवर का पैर पड़ जाये तो वह दो रूपये दण्ड शुल्क के रूप में वसूलता था।

सिंचाई व्यवस्था की दशा बड़ी दयनीय थी, बारिश के पानी को छोड़ अन्य सभी स्त्रोतों पर जमींदारों का अधिकार था, जिसके चलते वे किसानों को खेतों की सिंचाई में बाधा पहुँचाते थे। जमींदार सार्वजनिक तालाबों, कुँओं आदि से सिंचाई पर नजराना वसूलते थे, जबकि तालाब या कुँआ खोदवाने का खर्च भी काश्तकारों से जमींदार वसूलता था।

इसी तरह जमींदार अपने जानवरों के लिए काश्तकारों से मुफ्त भूसा अथवा बाजार मूल्य से जमींदार अपनी जलावन आवश्यकता की पूर्ति के लिए उपले अथवा कण्डों की वसूली करते थे। दुधारू पशुओं के पालकों से दूध, गड़रियों से बकरी एवं ऊन, कम्बल, चमार जाति से जूते व चरसा वसूला जाता था। इसी तरह नाई, धोबी, भंगी आदि से जमींदारों द्वारा बेगारी कराई जाती थी। 'हारी बेगारी' प्रथा द्वारा जमींदार अपने खेतों को मुफ्त में जोतवाते थे, तो इसी तरह खरीफ एवं रबी की फसलों की सिंचाई बेड़ी/दोगला से कराते थे ।

औपनिवेशिक शासन काल में अधिकारियों द्वारा जब गाँवों में कैम्प किया जाता था, तो उनके कैम्प लगाने से लेकर सेवा एवं सेवा-सामग्रियों तक किसानों से मुफ्त में लिया जाता था । अधिकारियों का दौरा राजकीय अभिलेख में किसानों की दशा के निरीक्षण के लिए दर्ज होता था, जबकि वे आमतौर पर चिड़ीमारी एवं शिकार में अपना वक्त गुजारते थे। इस दौरान उनके चपरासी घोड़ों के चारे को काश्तकारों के फसलों से प्राप्त करते थे एवं अपने लिए मुफ्त में दूध, अनाज, मुर्गे, बत्तख, और कबूतर भी लेते थे तथा ग्रामीणों से बोझा ढुलवाया जाता था । इस अवसर पर जमींदार काश्तकारों से 'नजर' नामक 'कर' वसूलता था। इन गैर कानूनी 'करों' की उगाही कमिश्नरावन, डिप्टी कमिश्नरावन, लट्टयावन, उटाँवन, मुड़ावन, अन्नाप्रशान आदि नामों से की जाती थी ।जमींदार दशहरा, होली, ईद आदि मौके पर त्यौहारों पर 'नजर' कर लेते थे। हद तो यह थी कि, मुसलमान तालुकेदार केवल ईद के साथ दशहरे पर भी नजर लेते थे। इसी तरह जब कोई तालुकेदार राजा की उपाधि धारण करता था, तो वह 'रजौटी' कर और गाड़ी खरीदता था 'मोटरावन कर और नई हाथी खरीदने के लिए 'हाथियावन कर' लेते थे। इसी तरह घोड़ा खरीदने के लिए 'घोड़ावन कर वसूला जाता था और घोड़े के बूढ़े हो जाने पर लॉटरी बेचकर जमींदार मुनाफा कमाते थे। जमींदारों के कर वसूलने का कोई मानक नहीं होता था; यथा- 'ग्रामोंफोनिंग कर' एक जमींदार अपने पुत्र के ग्रामोंफोन बाजा खरीदने पर लगाया था, क्योंकि उसका आवारे लड़के ने गानों की आवाज गाँव वालों को सुनायी थी। तालुकेदारों पर मुकदमों का अत्यधिक बोझ होता था, जिसके खर्च के लिए भी वे काश्तकारों से कर वसूलते थे। इसी तरह तालुकेदार द्वारा कोई 'दान' करता था, तो उस धनराशि की वसूली काश्तकारों से की जाती थी।

जैसा सन् *1920* ई0 में लखनऊ विश्वविद्यालय के निर्माण के लिए सिसेंडी जागीर ने *50,000* रूपये 'दान' करने का वचन दिया, जिसकी राशि को उसने लगान की तरह वसूली किया। जवाहरलाल नेहरू ने ऐसे दान को 'प्रतिनिधिक दान' की संज्ञा दी थी। यद्यपि ऐसे अवैध कर की वसूली गैर कानूनी थी, किन्तु बेसहारा किसान बेदखली के डर से अदालत में न्याय के लिए नहीं जाते थे। इसलिए व्यवहार में ऐसे कर वसूले जाते थे, क्योंकि एक चमार या कुर्मी अपने ठाकुर भूस्वामी के विरोध में मुकदमा करने के बाद उस गाँव में रहे, ऐसा संभव नहीं था। इसी तरह ज्यादातर तालुकेदारों को ऑनरेरी या स्पेशल मजिस्ट्रेट अथवा मुन्सिफ का का दर्जा मिला होता था, जो अपने वर्ग तालुकेदार के पक्ष में ही निर्णय देते थे।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान युद्ध खर्च के लिए किसानों से धन उगाही के निमित्त उत्पीड़न और असंतोष अपने चरम पर पहुँच गया । करीब सभी तालुकेदारों ने ऐलान कर दिया था कि भूराजस्व के आधे के बराबर लड़ाई चन्दा वसूला जायेगा, जबकि व्यवहार में उन्होंने साल भर के राजस्व के बराबर चन्दा वसूले। साथ ही साथ किसानों को बेदखली का भय दिखाकर युद्ध के लिए सेना में भर्ती होने के लिए विवश किया गया। युद्ध में एक काश्तकार ने अपने बेटे को युद्ध नहीं करवाने के बदले तालुकेदार को *200* रूपये दिये थे। तालुकेदारों ने सेना में भर्ती होने के समय वादा किया था कि बकाया लगान माफ होगा, जंग के दौरान लगान से मुक्ति और जंग से लौटने पर सस्ती दरों पर जमीन का आश्वासन इत्यादि । किन्तु जब युद्ध समाप्त हुआ और सैनिक अपने घर लौटे, तो जमींदार अपने वायदों से साफ-साफ मुकर गये। युद्ध के दौरान जिन सैनिकों के माता-पिता की मृत्यु हो चुकी थी, उन्हें अपनी जमीन पुनः पाने के लिए भारी भरकम नजराना देना पड़ रहा था। कई सैनिकों की विधवाओं को 'मुर्दाफरोशी प्रथा' के तहत बेदखल कर दिया गया। दूसरी ओर युद्ध के दौरान अनाजों के दाम आसमान छूने लगे थे, जिनका लाभ सूदखोरों को मिला अर्थात् प्राप्त रकम को उनके कर्ज व ब्याज देने में चुकता किया जाता था और तालुकेदार बढ़ी कीमतों से निपटने के लिए नजराना वसूल करते थे।

संक्षेप में, सम्पूर्ण प्रान्त के काश्तकारों में अवध और पूर्वी जिलों की स्थिति अत्यंत खराब थी, जबकि पश्चिम जिलों में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के विस्तार से व्यवसाय के अन्य अवसरों की उपलब्धता बढ रही थी। इसी तारतम्यता में पश्चिम जिलों में जनसंख्या का घनत्त्व बढ़ने के बजाय कम हो रहा था, कानूनी दृष्टि से काश्तकार अधिक सुरक्षित थे और दखलकारी काश्तकारों की संख्या में वृद्धि हो रही थी, चौथा गैर कानूनी 'कर' कम ही वसूले जाते थे, नहरों से सिंचाई की सुविधा होने के वहां सूखे में भी कृषि उन्नत थी। दूसरी तरफ अवध में औद्योगीकरण की प्रक्रिया अति-मंद थी, जिसके चलते व्यवसाय के अन्य अवसरों की उपलब्धता का आभाव था । इन कारणों से असंतोष की आवाज सर्वप्रथम अवध में उठी जो प्रथम विश्वयुद्ध के बाद उपजी आराजक परिस्थितियों में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी थी।

# नाटक –किस्सा गंगा जमुनी मुहल्ले का

रत्ना कौल जी द्वारा लिखित इस कहानी का नाट्य रूपांतरण एवम दृश्य परिकल्पना प्रख्यात नाट्य निर्देशिका चित्रा मोहन जी ने किया है 16 जनवरी, 2024 को संत गाडगे जी महाराज प्रेक्षागृह, लखनऊ में इस नाटक का सफल मंचन हुआ ..प्रस्तुत है "किस्सा गंगा जमुनी मुहल्ले का"

**(मंच पर अंधेरा है। फ़िल्म'चौदहवी का चाँद' का गीत ये लखनऊ की सरज़मीं का मुखड़ा (स्थायी) और अंतरा उभरता है/गीत के बोल पर (preset) पर हल्का प्रकाश आने के साथ साथ कलाकारों द्वारा मंच पर निर्देशनुसार नृत्य-संयोजना और दृश्य की स्थापना होगी / इस पूरे गतिविधि में लखनऊ के कुछ ख़ास प्रतीक जैसे इमामबाड़ा, रूमिगेट, मनकामेश्वर मंदिर, सिद्धनाथ मंदिर, अलीगंज हनुमान मंदिर, बारादरी के चित्र दिखाई देंगे, साथ साथ अमीनाबाद की तंग गलियाँ और बाज़ार, हज़रतगंज की सड़के आदि भी चित्र में दींखेंगे जो कलाकारों द्वारा मंच पर नृत्य गतिविधि के दौरान प्रदर्शित किये जा सकेंगे। गीत की समाप्ति होते होते मंच के भाग में सूरैयाबेग़म का घर नज़र आता है। एक चौकी पर पानदान, दलिया में पान और सारौता, एक हुक्का भी रखा दिखाई देता है। हल्का हल्काप्रकाश मंच के अग्रभाग में आता है, जहाँ साइकिल पे सवार एक युवक पीछे दूसरे युवक को बिठाए अन्दर आता है, दोनो साएकिल एक कोने में खड़ी कर के सामने से आती दो लड़कियों को देख कर ठिठक जाते है।)**

**(एक लड़की बुर्के में है, दूसरी सलवार-क़मीज़ दुपट्टे में है, दोनो के हाथों में किताबें हैं। दोनो खिलखिलातीं हुई आगे आती है तभी बुर्क़वाली लड़की की चप्पल टूटती है, वो लड़खड़ा जाती है, किताबें ज़मीन पर गीर जाती है। ये देख दोनो लड़के दौड़ कर आगे आते हैं, एक चप्पल जोड़ने की असफल कोशिश करता है, दूसरा किताबें उठाकर सहेजने में मदद करता है।)**

**लड़का (नासिर) - (टूटी चप्पल लटकाए हुए) -** हाय रे क़िस्मत ! तू चप्पल ना हुई गोया किसी आशिक़ का दिल हो गई, जो सरे राह टूट जाया करता है।

**बुर्क़वाली लड़की:-** हाय रे क़िस्मत **( दूसरी चप्पल उठाकर)** तू चप्पल ना हुई गोया किसी थानेदार का डंडा हो गई जो सारे राह बरस जाया करता है। **(दोनो हँसती हैं)**

**लड़का (आतिश):-** नाराज़ ना हों मोहतरमा.. मेरा दोस्त थोड़ा शरीर है मगर बतमीज़ नहीं। ये लीजिए अपनी किताबें **(दूसरी लड़की से),** देखिये... इनकी चप्पल टूट गई है, चलने में परेशानी होगी, आप दो घड़ी बैठ जाए तो मेरा दोस्त..... नासिर... नाम है इसका, ये चप्पल बनवा लाएगा- **(नासिर गुस्से में घूरता है फिर मुस्कुराता है...।)**

**नासिर:-** जी जी... बिल्कुल दुरुस्त है, लाइए मैं आपकी चप्पल बनवालाता हूँ **(लड़की चप्पल देती है, नासिर जाता है।)**

**लड़का (आतिश):-**जी मेरा नाम आतिश है, आप दोनो का नाम जान सकता हूँ...?

**लड़की (मनोरमा):-** मैं मनोरमा, बग़ल वाली गली में जो राधेश्याम संदफ जी रहते है, उनकी चचेरी बहन हूँ, बी. ए. करने लखनऊ आइ हूँ।

**आतिश:-** ओह.. तो आप हमारे संदफ साहेब यानी राधेश्याम पांडेय जी की बहन निकली! भाई उनके घर शेरों शायरी की महफ़िल में हमारा तो खूब आना जाना होता है।

**मनोरमा:-** अच्छा तो जनाब शायर है, ये आतिश तख़ल्लुस है या नाम?

**आतिश-**बंदे को कहते है आकाश माथुर... आतिश तख़ल्लुस है।

**बुर्क़वाली-** वाह आतिश मियाँ... आपकी शायरी के बड़े चर्चे है। घर- घर में आपके कलाम, आपकी ग़ज़लें पढ़ी जाती है। हमारे अब्बू आपके फैन है।

**आतिश-** जी ज़र्रानवजी है आपकी, वैसे आपसे भी तर्रूफ हो जाता

**बुर्क़वाली-** जी मैं नवाजुद्दीन साहब.. वही सफ़ेद कोठी वाले की छोटी बहन रक्शा हूँ। मनोरमा के साथ ही पड़ती हूँ।

**आतिश-**आप दोनो से मुलाक़ात हो गई ये ख़ुशक़िस्मती है हमारी **(तभी नासिर चप्पल लेकर आ जाता है)।**

**नासिर-** ख़ुशक़िस्मती आपकी है मोहतरमा, जो ज़नाब मोची साहबमिल गए, दुकान बड़ा चुके थे। हज़ार मिन्नतें कीं तो राज़ी हुए।

**रक्शा-** शुक्रिया... नासिर मियाँ-कितने पैसे हुए?

**नासिर** -तौबा तौबा, हम आपसे पैसे लेंगे...?

**रक्शा-**देखिए..., ये तो नाइंसाफ़ी है, पैसे तो लेने पड़ेंगे।

**नासिर-(आतिश से) -** अमाँ यार आतिश, आप ही कुछ कहिए...

**आतिश-**हम क्या कहें? जो कहना है, आप खुद कहे-

**नासिर-**

ये सिलसिला लेनदेन का छोड़िए ज़नाब
मौक़ा-ए-ख़िदमत तो दीजिए ज़नाब
आज टूटी एक, तो बनवा लाए हैं ज़नाब
कल शौक़ से तोड़िए... दूसरी भी ज़नाब ॥

मनोरमा-

भाभी हूँ आपकी, ठहरिए तो ज़नाब
ईनाम समझ के पैसे लीजिए ज़नाब ॥

**(आतिश वाह कहते है, मनोरमा झेंप जाती है, दोनो लड़कियाँ मुस्कुराती है, सब खिलखिला कर हँसते है तभी नेपथ्य से शोर सा उठता है.....)**

"बुडुन खाला-बुडुन खाला,
सफ़ेद बाल, सुपन्ना ढीला-ढाला,
कुर्ता तेरा दो जेबों वाला / चश्मा कमानी वाला...।

**चिढ़ी हुई सी बुडुन खाला का प्रवेश-**

**बुडुन-**रोनामुरादों, शैतान की औलादों, ख़ुदागस्त करे ऐसे बदजुबानो को। ए तौबा... हैं... लड़के है या जी का जंजाल। कमबक्खतो को ज़रा भी शर्म लिहाज़ नहीं है, बड़े बुजुर्गों का?.....

**(तब दोनो लड़कियाँ बुडुन खाला को देखकर निकल जाती है। आतिश और नासिर भी निकलने को होते है तभी बुड्डून खाला साइकिल पकड़ लेती है। नासिर पीछे बैठा है... बोल पड़ता है)**

**नासिर-**लहौल विला कूबत....साइकिल छोड़िए बुड्डी खाला.. हम गिर पड़ेंगे।

**(बुड्डुन खाला उन्हें खींचकर गिराय ही देती है, नासिर हाय-हाय करता उठता है)**

**बुडुन खाला-** ए मरदुए... मैं बुड्डी खाला हूँ! अभी देख कितना ज़ोर है मेरे बाजुओं में।ए, मेरे हाथ-पाव तो चलते ही चलते है, जुबान छुरी से भी ज़्यादा तेज़ चलती है, बड़ा आया हमें बुड्डी खाला कहने वाला. अरे सिरफिरे? नाशूके लौंडे, बुड्डी कहने से पहले तेरी जुबान न ऐंठ गई? गटर के कीड़े, बुड्डी होगी तेरी दादी, नानी... बुड्डा होगा तू, तेरी जवानी, हाय हाय, हमें बुड्डी कहता है?ए हैं अभी मेरी उम्र ही क्या हुई है, वो तो कमबख़्तवक़्त की मार ऐसी पड़ी कि ये महजबि बहारें गुल से उजड़ा चमन हो गई।

**आतिश-** माफ़ करे, मेरे दोस्त से जो भी बहदबी हुई उसके लिए मैं आपसे माफ़ी माँगता हूँ...महज़बी खाला।

**बुड्डुन-** आए हाय-क्या शीरी जुबान पाई हैं। लफ़्ज़ तो मोती से बिखरते हैं, अदब, लियाक़त इसे कहते है। जीते रहिए बरखुरदार। अल्ला रहम करे आप पर और आपके इस दोस्त पर भी, जो हमें ख़ामख़ा बुड्डी बना रहा।

**नासिर-**अब गुस्सा थूक भी दो माहज़बी खाला। हो गई हमसे नादानी। लीजिए कान पकड़ते हैं.... अब हम जाए? इजाज़त हैं..?

**(बुडुन हाँ बोलती है... दोनो साइकिल पर बैठकर बाहर जाते है तभी नासिर खुद कर उतरता है और शैतानी से बोलता है.....)**

**नासिर -** अरे ....ख़ुदा हाफ़िज़ बुड्डी खाला।.... **(कहकर भाग जाता है)** बुड्डुन फिर चिल्लाती है.....

**बुड्डून-** ठहर जा, तू टिड्डे की औलाद, रुक जा.....तेरी टांगे तोड़ कर चूरमा बनाऊँगी, करमजले, नफ़रमान, बेईमान, तुझ पर शहद की मक्खियाँ टूट पड़े, तेरा बेड़ा गर्क हो जाए

**(तभी बुड्डून थक कर बैठ जाती है....तभी नासिर पलट कर आता है, खाला को गले लगाकर माफ़ी माँगता हैं। अपनी ज़ेब से डिब्बा निकालकर पान खिलाता है, फिर खाला बोलती है.....)**

**बुड्डुन-** देखा-देखा आप सबने..... ये गली के लड़के, नोज़वान सब छेड़ते है मुझे बुड्डी खाला कह कह कर के। 'बुड्डी' नाम मेरी छेड़ बन गया है, लेकिन सब प्यार भी बहुत करते है मुझे। मुहल्ले की माहज़बी खाला हूँ मैं। जिस घर जाती हूँ रौनक़ आ जाती है वहाँ। अब आए क्यों नही..? जाने कितनी कहानियाँ परी पड़ी मेरे कुर्ते की जेबों में। जितनी तितलियाँ हैं आसमानो में, जितने फूल हैं बागों में, जितने सितारे हैं फ़लक पर, उससे

कहीं ज़्यादा कहानियाँ जुबानी याद है मुझे।.... क़सम खिला लो जो रत्ती भर झूट बोलती तो...?
हर घर का हाल जानती हूँ, पर करम ख़ुदा का, सबका भला चाहती हूँ। चार दिन की चाँदनी, आँधी से ज़्यादा काट गई, बची-खूची सबके साथ, प्यार मोहब्बत से कर जाए तो ऊपर वाले की मेहरबानी....
ए हां... याद आया, अभी तो सूरेया बेग़म ने बुलाया था क्या? कौन सुरेया बेग़म, अजी वही हमारे नवाजुद्दीन साहब की शरिके हयात आज उनकी कहानी सुनाती हूँ तो सुरेया बेग़म तीन बहुओं की लाड़ली सास, शोहर की ख़ास,बेटे-बहुओं के लाड़-प्यार, इज्जत-अफ़जाई से खिली-खिली रहती हैं **(ये कहते कहते सुरेया बेग़म वाले हिस्से में आ जाती है)** ए! क्यों न हों... बेटे-बहुए हाथों-हाथ जो रखते हैं।
**(मंच पर गाव तकिये के सहारे बैठी सुरेया नज़र आती है। बहुए उन्हें घेरे हैं, कोई नई चूड़ी पहना रही, कोई उनकी पाज़ेब ठीक कर रही, कोई पान लगा कर गिलोरि थमा रही है। तभी दूर से आते नवाजुद्दीन को देखती बुड्डुन खाला बोल पड़ती है)**
**(अंदर से नवाजुद्दीन साहब आ रहे है)**
**बुड्डून-** ये जो सफ़ेद रेशमी कुर्ता सिल्क का, नीले रंग का तहबंद और ये जो खूबसूरत नई जैकेट पहनी है न इन्होंने... ये छोटी बहू लाई है। तो ये ज़नाब नवाजुद्दीन मियाँ जो कितनी शान से गाव तकिए के सहारे सहन में रखे दीवान पर पसर कर बैठ गए है।
ऐ हैं..! ख़ुदा इन सबको नज़रें बंद से बचाए - नक्ख़ास, अजी अपने लखनऊ का नक्ख़ास बाज़ार, वोहि रेडीमेड कपड़ों का ढेर ठेले पर रख कर बेचने वाले नब्बन के दिन ऐसे फिरेंगे किसी को गुमान भी नहीं था- -'अबे नब्बन' ऐसा कह कर पुकारे जाने वाले नब्बन मियाँ अब नवाजुद्दीन साहब कहलाते हैं-
**(संगीत.....**
ख़ुदा झूट ना बुलवाए, क़िस्मत के रंग देख रहे हैं लोग, ढलती उम्र का बोझ इनके काँधो पर नहीं पड़ा है, बल्कि उम्र बड़ने के साथ वह और ज़्यादा चोड़े, मज़बूत और तने हुए दिखने लगे हैं
**(सारे लोग सामूहिक हँसी गूँज उठती है.....)**
**बहू-१-**वाह अब्बू जान वाह.... आप कितने प्यारे क़िस्से सुनाते हैं।
**बहू-२-**क़िस्से ही नही अब्बा मियाँ गाते भी बहुत उम्दा हैं.... अब्बा कुछ सुनाइए न
**बहू-३-**अब्बू आप मेहंदी हसन साहब की ग़ज़ल सुनाइए, एकदम वैसा ही गाते है आप।
**नवाजुद्दीन-**अरे-रे आज तुम सब ने भंग चढ़ाई हैं क्या? या फिर सबके सब मिलके मेरी ही टाँग खिचने पर आमादा हो।
**सुरेया-**अजी क्यों बहाने बना कर बच्चों का दिल तोड़ते हैं..?
**(तब तक बड़ा बेटा अक़बर मिठाई लिए अंदर आता है)**
**अक़बर-**अब्बा-अम्मी...लीजिए..मिठाई खाइए.....एक ख़ुशख़बरी लाया हूँ।
**(सब एक साथ बोलते है- ख़ुशख़बरी-कैसी ख़ुशख़बरी?)**
**अक़बर-**हमारे बिज़नेस के लिए हमें मुंबई और दुबई से दो बड़े ऑर्डर मिले हैं। लाखों का मुनाफ़ा हाथ आया है
**(सब हाथ उठा कर ऊपर वाले का शुक्रिया अदा करते है और मिठाई खाते है, तब तक बुडुन भी अंदर आ जाती है, दुआ-सलाम के साथ मिठाई खा कर आशीष देती हैं)**

**(शेष अगले अंक में )**

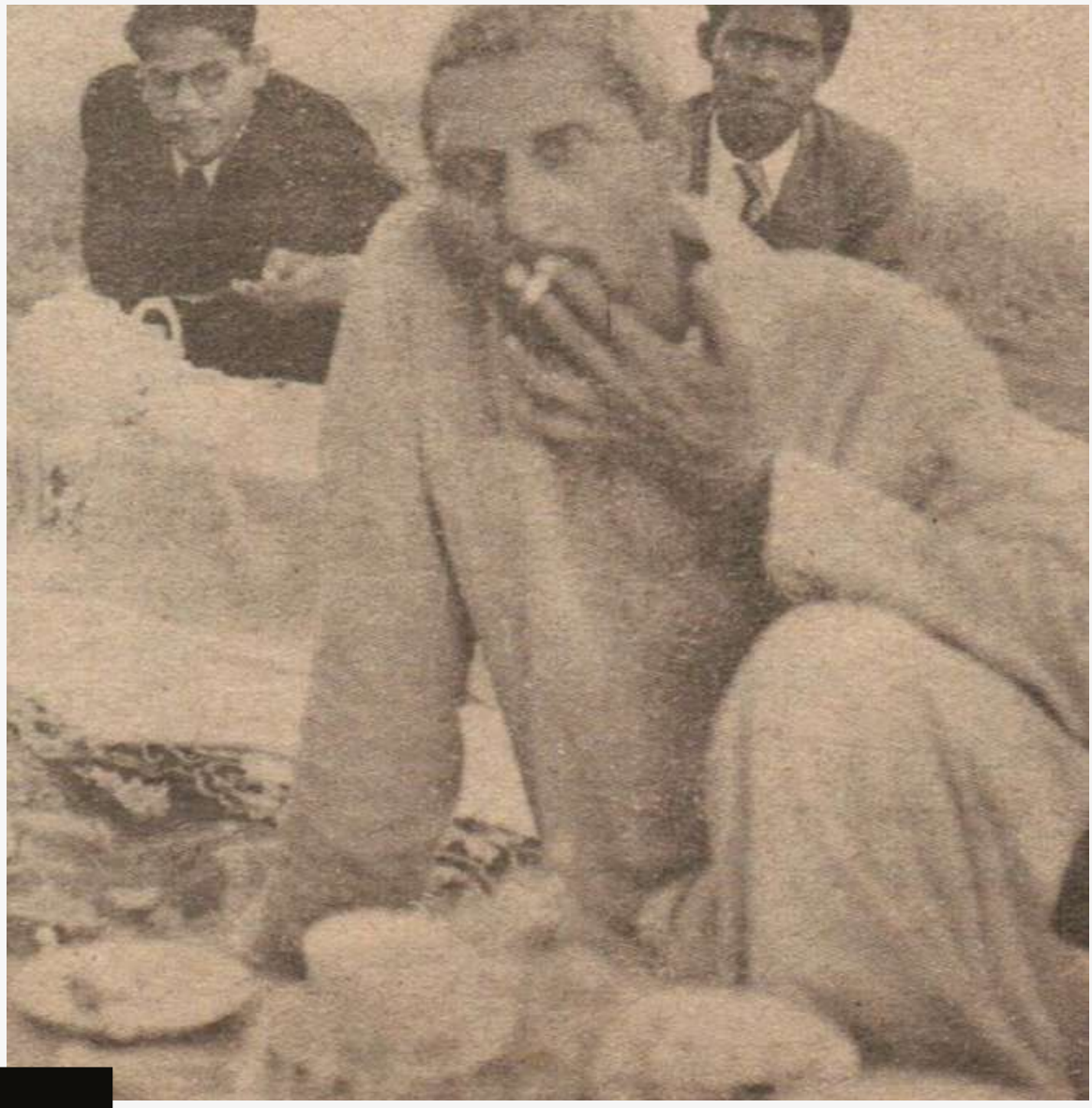

# महाप्राण निराला

सुमित उपाध्याय

21 फ़रवरी, 1897 को जन्मे हिंदी के महाप्राण कवि निराला की दो लम्बी कवितायेँ, सरोज स्मृति और राम की शक्ति पूजा छायावाद की दो सशक्त रचनायें हैं और साथ ही एक संघर्षरत रचनाकार की पराजय से लेकर शक्ति-साधना करते हुए विजय प्राप्ति तक सम्पूर्ण गाथा का सचित्र वर्णन करती हैं । अगर यह सत्य है कि एक रचना से अधिक महत्वपूर्ण उसकी रचना प्रक्रिया होती है तो अपनी पुत्री सरोज की मृत्यु के बाद टूट चुके निराला फिर से अगले ही वर्ष अपनी तपस्या आरम्भ करते हैं, अपनी काव्य-शक्ति को पुनः साधते हैं और राम की शक्तिपूजा जैसी कविता लिख कर साहित्य के समरक्षेत्र में ही नही जीवन के युद्ध में भी अपनी जीवंतता सिद्ध करते हैं ।

हिंदी साहित्य में शोक गीत कम ही लिखे गये और किसी पिता ने पुत्री पर कोई शोक गीत लिखा हो इसकी तो पाश्चात्य साहित्य में भी झलक नही मिलती । यूरोप के शोक गीतों में दुःख का ऐसा विकराल रूप कहीं नहीं है । किन्तु शेक्सपियर के किंग लियर में मृत्यु के कुछ छण पूर्व जब लियर अपनी मृत कन्या कौर्डीलिया का शव लिए मंच पर आता है:

Why should a dog, a horse, a rat, have life,
And thou no breath at all ? Thou' It come no more,
Never, never, never, never never !

निराला का क्रुद्ध-विक्षुब्ध स्वर लियर की करुण व्याकुल पुकार से मिलती-जुलती है । सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की 'सरोज स्मृति' कविता हिंदी में अपने ढंग का एकमात्र शोकगीत है।....निराला ने इसे अपनी एकलौती पुत्री सरोज की मृत्यु के पश्चात लिखा था। बेटी के रंग-रूप में निराला जी को अपनी पत्नी का रंग-रूप दिखाई पड़ता हैं।

जन्म के ढाई वर्ष में माँ को खो देने वाले सुर्जकुमार तिवारी को पढ़ने का सही अवसर नही मिला । जीवन के अपार दुःख झेलने के बाद सन 1920 के गांधी जी के असहयोग आन्दोलन ने मन को हिलोड़ा तो "सन ,20 के बसंत में सुर्जकुमार ने जन्मभूमि पर एक गीत लिखा :

बंदू मैं अमल-कमल,-/चिर सेवित चरण युगल
शोभामय शान्ति निलय पाप ताप हारी,/
मुक्तबंध, घनानंद मुद मंगलकारी ।।

और यहीं से सुर्जकुमार को नया जीवन मिला और सूर्यकांत तिवारी का उदय हुआ ।

यह सृजनशीलता एकदम से किसी भावावेश की देन नहीं थी । जिस जमीन पर निराला का जीवन चल रहा था निराला जानते थे शब्दों को बोना है, बीज के पकने का इंतज़ार करना है- वह शब्दों के दाने आने का इंतज़ार करते थे । केदारनाथ सिंह जी की कविता मानो निराला के इतिहास की ओर ले जाती है :

" चुप रहने से कोई फायदा नहीं
/मैंने दोस्तों से कहा और दौड़ा
सीधे खेतों की ओर
/कि शब्द कहीं पक न गये हों
पकते हुए दाने के भीतर
/शब्द होने की पूरी संभावना थी" (ज़मीन पक रही है )

स्वयं निराला इस बात को महसूस ही नहीं व्यक्त भी करते थे, साईमन कमिशन जब लखनऊ में आया और पुलिस ने लखनऊ की निहत्थी जनता पर लाठियां बरसायीं तो निराला कहते हैं : " स्त्रियों और बच्चों के अंगो पर डंडों की मार और घावों से बहते हुए रक्त को देखकर अंग्रेज़ सरकार के लिए हमारे कोश में उपयुक्त शब्द नही हैं; मुमकिन है, पीछे गढ़ लिए जायें ।"

"शब्दों को पीछे गढ़ लेने" का इंतज़ार करने वाले निराला ने जब ' सरोज स्मृति' में कहा –

" दुःख ही जीवन की कथा रही/क्या कहूँ आज जो नहीं कही !

या जब " राम की शक्तिपूजा" में रघुपति श्री राम के नयन से तारों सी आंसू की बूंदें ढुलक पड़ीं –

"टूटा वह तार ध्यान का, स्थिर मन हुआ विकल,/संदिग्ध भाव की उठी दृष्टि, देखा अविकल
बैठे वे वही कमल लोचन, पर सजल नयन,/ व्याकुल -व्याकुल कुछ चिर प्रफुल्ल मुख,निश्चेतन ।

निराला के लिए दुःख या वियोग नया नहीं था । माँ के न रहने के बाद पिता रामसहाय ने लाड़-प्यार में कोई कमी न की थी । जीते जी मनोहरा देवी से झगड़ने वाले निराला, उनकी मृत्यु पर ही जागे ।

यह पर्दा क्या मृत्यु ही उठा सकती थी कि वह मनोहरादेवी की वास्तविक छवि देखें।.....एक दिन वह अवधूत के टीले पर बैठे थे; तभी कुल्ली ने आकर कहा"मैं जानता

हूँ, आप मनोहरा को बहुत चाहते थे । ईश्वर चाह की जगह मार देता है, होश कराने के लिए ।"
निराला को ब्रह्मज्ञान मिला । पर लेखनी नही उठी, मानो उसे अभी और इंतज़ार करना था ।
चाहे उनके निजी जीवन का व्यक्तित्व हो या फिर साहित्यिक जीवन का, निराला जो जीते थे वही लिखते थे। जो लिख देते वही जीते थे । उनके जीवन और साहित्य में कहीं कोई विसंगति नही मिलती है इसीलिए उनका निजी दर्शन उनके साहित्यिक सृजन के रूप में समाज के समक्ष आया है ।सृजन का क्षण आया तो पहले "जन्मभूमि की वंदना" लिखा यद्यपि दुःख, वेदना भीतर थी पर वह निराला के महान व्यक्तित्व के आगे नतमस्तक थी । शांतिप्रिय द्विवेदी जी ने निराला को लिखे अपने पत्र में स्पष्ट कहा," वेदनाओं ने आपको बहुत प्यार किया है और आपके ह्रदय ने करुण रस को, विश्व के व्यथित मात्र को। यही अदृश्य प्रभावोत्पादक प्रणय ही तो आपको अगली शताब्दियों के लिए अमर कर देगा" -
निराला की यह सारी साधना अपने कविकर्म और उसके विश्वास पर टिकी थी । पर अपनी आर्थिक स्थिति और दायित्वों को लेकर निराला चिंतित रहते थे । साधक निराला, व्यक्ति निराला पर हावी था सो रचना रुकने न पायी, पर सरोज की मृत्यु ने जैसे 1919 के बाद से 1934 तक की साधना पर प्रश्न खड़ा कर दिया । सरोज की मृत्यु ने निराला के सारे जीवन की सार्थकता और निरर्थकता का प्रश्न बड़े विकट रूप में उनके सामने प्रस्तुत कर दिया ।जिए तो किसके लिए। अब तक जी कर जो कुछ झेलते रहे, उसका फल क्या मिला ?
चढ़ मृत्यु-तरणि पर तूर्ण-चरण /कह-"पितः, पूर्ण आलोक वरण
करती हूँ मैं, यह नहीं मरण/ 'सरोज' का ज्योतिःशरण-तरण –
निराला की समझ में उस भयावह घटना के लिए दुलारेलाल भार्गव कम जिम्मेदार न थे।
यदि उन्होंने निराला की प्रतिभा को पहचाना होता, उनके परिश्रम का उचित मूल्य चुकाया होता तो यह स्थिति न आती ।"
जाना तो अर्थागमोपाय, पर रहा सदा संकुचित-काय
लख कर अनर्थ आर्थिक पथ पर/ हारता रहा मैं स्वार्थ-समर"(सरोज स्मृति )
ठीक इसी समय निराला की आलोचना भी शिखर पर थी ।सम्मेलनों में उन पर व्यंग्य किये जा रहे थे । निराला हर बाण को अकेले झेल रहे थे ।
देखें वे; हंसते हुए प्रवर /जो रहे साथ देखते सदा समर,/
एक साथ जब शत घात घूर्ण/आते थे मुझ पर तुले तूर्ण
देखता रहा मैं खड़ा अपल/ वह शर क्षेप, वह रण-कौशल ।( राम की शक्ति पूजा )
निराला ने आंसू नही गिराए । उनका दुःख उनके अन्तस् में कहीं जम गया ।अब वह पहले वाले निराला नही रह गये, अब वह पहले जैसे कभी नहीं हो सकते ।... निराला ने मन की सारी ताकत बटोर कर अपने को दुःख से अलग किया । सरोज स्मृति " सुधा" में प्रकाशित हो गयी । दुःख समाप्त न हुआ था, प्रश्न बन गया था । रावण जीत रहा था । उसके बाणों ने हाहाकार मचा दिया था । वह अपराजेय था ।
"रवि हुआ अस्त :ज्योति के पत्र पर लिखा अमर /रह गया राम -रावण का अपराजेय समर"
इसके बाद जब उन्होंने शय्या पर प्रेमचन्द को सामने देखा, तो जैसे एक साधक की हार दिख पड़ी । शक्ति की यह एकपक्षीय यात्रा उन्हें अच्छी नही लगी । एक रचयिता अपने अंदर के द्वंद्व से लड़ता है, वह उन परम्पराओं से जूझता है जो उसके लिए बाधक हैं जो उसे शक्तिहीन किये जा रहीं हैं । यही तो उसकी साधना है । यही तो संतुलन है । 'राम की शक्तिपूजा' में निराला के राम केवल लीलामय भगवान ही नहीं, बल्कि जीवन के जागतिक संघर्ष से जूझने वाले राम हैं ।

वे कभी-कभी निराला की ही तरह असमर्थ, असहाय और निराशापूर्ण अनुभव के दौर से गुजरते हुए दिखते हैं ।

“अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल/ भूधर ज्यों ध्यानमग्न ;केवल जलती मशाल ।
स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,रह -रह उठता जग जीवन में रावण-जय-भय;”

हर तरफ अन्धकार ही तो था। साहित्य ने दिया ही क्या था ?यह सारी साधना जब प्रकाशकों के सामने गयी तो उन्होंने निराला से योग्यता पूछी । डिग्रियां निराला के पास न थीं, इसका अभाव उन्हें सालता था । पैसे न थे, स्वयं न सही रामकृष्ण और सरोज को भी तो डिग्री न दिला पाए। छायावाद की स्थापना में घुल गये निराला और बदले में विश्वविद्यालयों के अध्यापकों से आलोचना मिली । सामने प्रेमचन्द थे, शय्या पर । रोगशय्या पर पड़े हुए निर्बल प्रेमचन्द ने निराला की चेतना के उन स्तरों को छुआ जो अब तक सोये थे। जिनसे अब तक निराला के मन का तार न जुड़ा था ।.....अंधकार केवल अन्धकार, आगे पहाड़ पीछे समुद्र मनुष्य कहाँ जाये कहाँ से शक्ति पाए ,चारों ओर विरोध कोलाहल, आकाश भी जैसे पराजित मनुष्य पर अट्टहास कर रहा हो । धिक्कार है इस जीवन को जिस में पराजय ही हाथ लगी । पर निराला लिखना नही छोड़ सकते .....

और – “ राम ने जप करना प्रारम्भ किया । जप के स्वर से आकाश काँप उठा, मन एक चक्र से दुसरे चक्र तक उपर उठता चला गया । सहस्त्रार तक पहुँचने ही वाला था की दुर्गा आयीं और पूजा का अंतिम कमल उठा ले गयीं । सिद्धि के अंतिम क्षण में विघ्न पड़ गया ।

ये अंतिम कमल सरोज थी । क्या निराला हार जाते ? नहीं उन्होंने साधना में स्वयं के अर्पण का ठान लिया । निराला रुक नही सकते थे। शक्ति को प्रसन्न होना ही था ।

वर्ष 1936, 8 अक्तूबर को प्रेमचन्द शरीर छोड़ गये । और 10 अक्टूबर को “ भारत” में राम की शक्तिपूजा” प्रकाशित हुई । 1935 में “ कन्ये, गत कर्मों का अर्पण /कर, करता मैं तेरा तर्पण” करने वाला निराला ने 1936 में लिखा –“ होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन!/कह महाशक्ति राम के वंदन में हुई लीन ।”

महिषादल में जन्मा सुर्जकुमार तिवारी जब गोमती के तट पर गाँधी जी से मिलता है तो वह महाप्राण कवि सूर्यकांत तिवारी “निराला” बन चूका होता है । निराला ने कहा, “अब किसी की आलोचना से, किसी की तारीफ़ से आगे आने की अपेक्षा मुझे नहीं रही । मैं खुद तमाम मुश्किलों को झेलता हुआ,अडचनों को पार करता हुआ, सामने आ चूका हूँ ।”

# भिखारी ठाकुर की परम्परा को आगे बढ़ाते भोजपुरी कवि दयाशंकर तिवारी जी

## पुस्तक समीक्षा

## “नाही लउके डहरिया के छोर”

**पं. दयाशंकर तिवारी जी भोजपुरी के जाने-माने कवि एवं गीतकार हैं, आप हिन्दी साहित्य के साथ-साथ भोजपुरी लोक गीतों की तरफ भी उन्मुख है, भोजपुरी मिट्टी मे जन्मे श्री तिवारी जी का मन भोजपुरी लोक गीतों की तरफ खूब रमा है, इन्हें भोजपुरी लोक संस्कृति की गहरी समझ है। हिन्दी में “वीर अभिमन्यु” खण्ड काव्य तथा “बिगुल और बांसुरी” काव्य संग्रह हैं । भोजपुरी में “माटी क महक’ गीतों का और “नाही लउके डहरिया के छोर” इनके भोजपुरी गीतों का नया संग्रह है। दयाशंकर तिवारी जी समकालीन हिन्दी साहित्य के साथ समकालीन भोजपुरी कविता का भी सृजन करते हैं।**

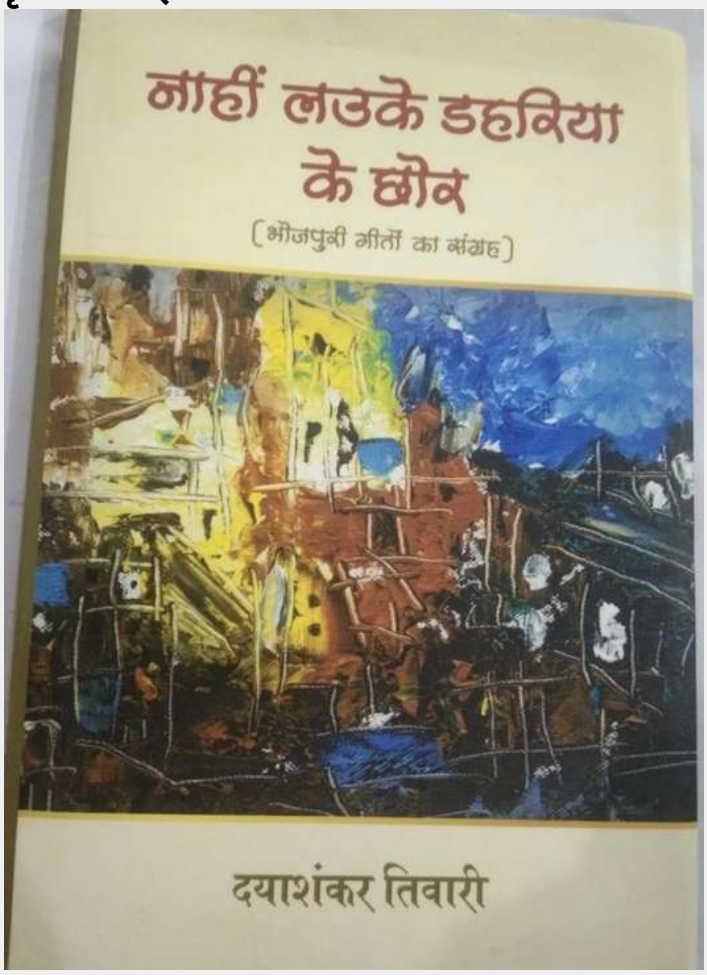

**डॉ धनञ्जय शर्मा**
**असिस्टेंट प्रोफेसर, सर्वोदय पी.जी. कॉलेज घोसी, मऊ**

**इस कविता संग्रह से तिवारी जी के लोक परम्परा, भारतीय संस्कृति, इतिहास, पुराण, शास्त्र के साथ-साथ मध्य एवं निम्न मध्यवर्ग के जीवन शैली, जीवन संघर्षों, पर्व-तीज त्योहार एवं लोक मान्यताओं की गहरी समझ का पता चलता है। स्वयं तिवारी जी के शब्दों में कहें तो “नाही लउके डहरिया के छोर" हर तरह के गीतों का अनूठा मिश्रित संग्रह है । जिसमें गीतों के अलावा भोजपुरी के कुछ दोहे तथा मुक्तक भी हैं। इस संग्रह में मौसम के गीत, सर्वहारा जीवन संघर्ष का वर्णन तथा कुछ भक्ति भावपूर्ण वंदना एवं भजन भी हैं..... किसी खास विषय को लेकर इन गीतों का सृजन न होकर, बल्कि अपने द्वारा भोगी हुई तथा देखी हुई वास्तविकता का वर्णन है, जो मन मस्तिष्क से होकर ह्रदय में उतर कर गीतों के रूप में प्रस्फुटित है।”**

"नाही लउके डहरिया के छोर" गीत संग्रह में कुल 44 गीत हैं, जिनके विषय वस्तु विशुद्ध ग्रामीण अंचल एवं किसान जीवन संघर्ष की गाथा है। ये गीत सहानुभूति के नही अपितु स्वानुभूतिपूर्ण भोगे हुए यर्थाथ की रचना है। जहाँ आम आदमी के जीवन में सामाजिक-आर्थिक-पारिवारिक गरीबी बेरोजगारी बीमारी का चित्रण है तो कहींहोली दीवाली फगुआ एवं भक्ति से परिपूर्ण रचनाए हैं। गीतों की शैली से पता चलता है कि भोजपुरी संस्कृति की एक-एक घटना को शब्दों में पिरोया गया है, गीत पढ़ते समय शब्द साकार हो उठते हैं। इस संग्रह की प्रथम रचना " नाहीं लउके डहरिया के छोर गोइयाँ" में वृद्धावस्था में मृत्यु से पूर्व आत्मसाक्षात्कार है, पूरा जीवन बीत गया, अंतिम समय आ गया लेकिन 'नाहीं लउके डहरिया के छोर' । अर्थात मंजिल का पता नहीं, कहाँ जाना है। जब अपना शरीर अपने को भारी लगने लगा, आँख, कान, घुटना सभी जवाब दे रहे हैं और काल (मृत्यु) चौखट पर दस्तक देकर कर तमाम प्रश्न पूछ रहा है-

देहिये भइल आपन अपने के भारी
निरदइया अबहीं ना छोड़े बेवपारी ।
आँखि कान ठेहुन जबाब दिहले तन के
काल करे अनगिन सवाल चुन-चुन के
होइ गइल बाटें विधनों कठोर गोइयाँ ।।

मृत्यु से साक्षात्कार के ठीक पहले जीव आत्ममंथन कर रहा है, मृत्यु सामने खड़ी है, जीव को लगता है अभी तो सारा काम बाकी है, मन की मुराद भी पूरी नही हुई, किसी से कुछ कह भी नहीं पाया तब तक अंतिम समय आ गया। यह पंचतत्व का शरीर बुझते हुए दीपक की भांति तेज रोशनी कर रहा है -

मटिया आ पनिया के देहियां बा छूंछे
अगिया अकसवा बतसवा से पूछे
ना कवनों थान बचल ना कवनों थाती
रहि-रहि के भभकेल तेलवा बिन बाती
इहे दियना क अखिरी अँजोर गोइयां ।।

"कइसे काटीं हो रतिया पहार बलमा" गृहस्थ जीवन के कटु सत्य को उजागर करते हुए घर की मालकिन किस प्रकार प्रबंधन करती है। सबका पोषण करती है, लेकिन हाड़तोड़ मेहनत के बाद भी झुलनी गढ़ाने का सपना अधूरा रह जाता है। किसान जीवन का वह कटु सत्य जिसका वर्णन मुंशी प्रेमचंद जी ने 'पूस की रात' में किया है वही दृश्य तिवारी जी यहाँ गीत के माध्यम से सामने लाते हैं, रात में फटी रजाई में 'कइसे काटी हो रतिया, गरीबी में बड़े बेटे की पढ़ाई छुट गई, तनख्वाह एक सप्ताह में समाप्त समाप्त हो जाती है, वस्तुओं के दाम अपने सामर्थ्य से बाहर चल रहे हैं। जाड़े के दिनों में दिन छोटा होने से मटर में अभी दाने नहीं है गन्ने की फसल का न होना-

छोटहर दिनवाँ के पतरी किरिनियाँ
लगलीं ना अबहीं मटरियो में छिमिया
असों उखियो न बाटे सोझार बलमा ॥
टूटले सपनवाँ गढ़ाने के झुलनियाँ
कपरा पर अपनों सवार भइल मुनियाँ
अबहीं छोटकी ननदियों कुँआर बलमा ॥

किसान स्त्री का झूलनी बनवाने का सपना अभी अधूरा रहता है तब तक पारिवारिक जिम्मेदारियों का दबाव इतना बढ़ जाता है कि छोटी ननद कुँवारी बैठी है, ऊपर से खुद की बेटी शादी योग्य हो जाती है। अर्थात गरीबी का आलम और महंगाई की मार दोनों के बीच पिस रहा आम आदमी का परिवार। अगले गीत "कइसे रोकीं आजु रोआई, रोटी खातिर छिड़लि लड़ाई।" लोगों में सहनशीलता गायब होती जा रही है नकली राजतंत्र और दिखावटीपन दुनियाँ की रीत बन गयी है-

किसिम किसिम के साज बनलबा
सिर पर नकली तान बन्हल बा
पोति पिसान देही पर केहू
भण्डारी महराज बनल बा ।।

नगरीकरण, औद्योगीकरण के कारण जंगल की कटाई, जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव को दर्शाते हुए लिखते हैं-

कइसे गाईं राग मल्हार
बदरा बरसे ना रसधार

राग मल्हार वर्षा ऋतु में गाया जाने वाला वियोग श्रृंगार का करुण राग है। कवि कहते हैं कैसे गाऊँ, न तो आकाश में बादल है, न बिजली, न पानी नदियाँ सूख रही हैं, हरे खेत मुरझा रहे हैं। ऐसे हाहाकार भरे वातावरण मे न तो कहीं झूला पड़ा है, न कजरी गायन हो रहा है, पता नहीं अबकी तीज त्यौहार कैसे मनेगा, अतः अब मैं कैसे राग मल्हार गाऊँ।

एक चिड़िया को सम्बोधित करते हुए लिखते हैं -

अबकी खोंतवा बनइहअ बिचार चिरई
कतहीं साबुत न गछियों के डार चिरई।

चिरई के माध्यम से मानव जीवन में पड़ने वाली समस्याओं को उजागर करते हैं। चारो तरफ दु:ख-विपत्ति, छल प्रपंच का वातावरण है, शहर और गाँव सबका व्यवहार बदल चुका है, हर तरफ शिकारी जाल फैलाए बैठा है- जगह - जगह लूटमार चोरिया बजरिया,

पंखिया पर तुहरे बा सभकर नजरिया
इहताँ तिनको क होला बेवपार चिरई ।।

पूँजीवादी युग में हर कोई बाजार के गिरफ्त में है। बाजार की नजर में हर कोई एक वस्तु है जिसका मूल्य निर्धारण बाजार कर रही है। उपभोक्तावाद की दौड़ में इंसान अंधा बन गया है।आगे चिरई से प्रश्न करते हैं कि तुम गिरजा घर में जाती हो कि गुरुद्वारा में, तुम्हे मंदिर प्यारा है कि मस्जिद प्यारा है अर्थात प्रकृति को मंदिर मस्जिद से लेना देना नहीं है प्रकृति का अपना धर्म है, "सर्वे भवन्तु सुखिनः" सबका भला हो। यहां तो मजहबी रंग की मार चल रही है।

गिरिजा घर जालू कि जालू गुरुद्वरवा
मन भावे मंदिर कि मस्जिद मिनरवा
बाटे गजबे मजहबन क मार चिरई।।

भारतीय गृहस्थ परम्परा में स्त्री पुरुष के सुखी जीवन की कल्पना की गयी है। इसके लिए दोनो जी तोड़ मेहनत करते हैं । बावजूद इसके स्त्रीजीवन संतुष्ट नही हो पाता – “घुमा द पिया हमरो के” गीत में स्त्री का दर्द उभरकर सामने आया है,अपने पति से रेशमी साड़ी पहन कर पटना शहर घूमने की याचना करती है। यह समस्या लगभग हर परिवार में देखी जा सकती है-

घुमा द पिया हमरो के पटना शहरिया ।
पहिरा के रेशमी बनारस क सरिया ।

स्त्री कहती है मैने आपसे कभी कुछ नही माँगा, बचपन से अब तक धूल मिट्टी में जीवन बीत गया । सहेलियों संग बिछिया, सुपेली का खेल खेलती रही, नीम के सींक से बनी झुमका और झालर पहन कर दिन गुजार दिए। अब पति के संग मिल कर विपत्ति को हँस कर बिता दिया। स्त्री आजीवन सिंदूर की मर्यादा निभाती रही -

मेहनतिये से मिलले सब कुछ सजनवाँ
उगिलेला सोनवाँ कोइलवा खदनवाँ
झरिया क सभ कुछ देखवलसि नोकरिया
घुमा द पिया हमरो के पटना शहरिया !!

मेहनतकस नौकरी करते हुए झरिया कोयले की खदान में काम करते हुए परिवार को तो आगे बढ़ाया पर अपनी लालसाओं से वंचित रह गई। झरिया शहर में काम करने से पूरी देह काली हो गयी, अब हमे बनारसी साड़ी पहनाकर पटना शहर घुमा दीजिए।

समकालीन गीत संग्रह "नाही लउके डहरिया के छोर", दयाशंकर तिवारी जी द्वारा रचित भोजपुरी गीत परम्परा में मील का पत्थर है, यहां एक तरफ भोजपुरी संस्कृति है तो दूसरी तरफ कठिन जीवन संघर्ष के बीच आम आदमी है। यहां रामबृक्ष बेनीपुरी का ' गेहूं बनाम गुलाब ' की संस्कृति चरितार्थ है। भाषायी बुनावट प्रसंगानुकूल है, भोजपुरी के लोक प्रचलित शब्दो का चुन- चुन कर प्रयोग किया गया है। यथास्थान लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग हुआ है। गीतों में भोजपुरी मिट्टी की महक एवं लोक संस्कृति की झलक का अनूठा संगम है। गीतों की भाषा भोजपुरी मिठास लिए हुए है, लोक गीतों के माध्यम से तिवारी जी ने भिखारी ठाकुर की परम्परा को आगे बढ़ाया है। गीत को पढ़ते हुए पात्र साकार हो उठते है। खेत खलिहान मिट्टी की महक जगह-जगह अपनी गंध छोड़ती रहती है। गेयता की दृष्टि से पूर्णतः सार्थक एवं सफल गीत काव्य है।

हास्य-वीथी

# हरखू भैया

लेखिका – अनु

हमारे ननिहाल में एक थे हरखू भैया, बेचारे भोले-भाले हरखू और कड़कदार मिर्ची की तरह तीखी उनकी घरवाली। हरखू भाई के समधी आने वाले थे तो खुब अच्छी-अच्छी मोटी लिट्टी, लहसुन-मिर्ची की चटनी और हमारे ननिहाल से गये दही का बढ़िया माठा तैयार हुआ चकाचक ।

अब भैया दोनों समधी जी आंगन से सटे ओसारे में पीढा पर बैठे, हंसी-मजाक-ठट्ठा में भोजन शुरू हुआ तब तक घरवाली ने बुलाकर धीरे से हरखू जी को समझाया कि तीन ही मोटी लिट्टी बनाई हूं । वैसे तो पेट भर ही जाएगा समधी जी का लेकिन मर्यादा के अनुसार मैं दूसरी लिट्टी के लिए पुछूंगी तो आप पहले ही नहीं-नहीं कह दीजिएगा तो आपका सुनकर वो भी मना कर देंगे तो तीसरी मैं खा लूंगी ।

बेचारे हरखू भैया ने आंख के इशारे पर दूसरी लिट्टी की बात आते ही मना तो करना चाहा पर हिम्मत नहीं हो सकी बोले, “लाओ आधी दे ही दो समधी को”, अब समधी जी पीछे क्यों रहते अपनी वाली हरखू को दे दी,मजबूरी में बची आधी समधी जी की थाली में ।

अब आगे देखिए पत्नी बुरी तरह नाराज तो थी ही बोली सुनो समधी जी को दुआर पर सुलाना,खुली हवा लगेगी और तुम छत पर सोना । .हरखू ने जिद करके समधी जी को दुआर पर सुला दिया, अब भैया आधी रात को जब मच्छर ने काटना शुरू किया तो समधी जी छत पर पहुंचे और हरखू को नीचे भेज दिया । छत पर ठंडी हवा में जैसे ही आंख लगी थी तब तक समधी जी के ऊपर ले झाड़ू-दे झाड़ू की पिटाई शुरू हुई,समधी जी बाप-बाप चिल्लाते हुए नीचे भागे और उनको देखकर समधिन घर में भागीं ।

जगह बदल जाने से लिट्टी का गुस्सा हरखू की जगह समधी जी पर उतर गया और समधी जी उसी वक्त अपने गांव निकल लिए । अब आगे आप समझदार हैं ही .....

# भूटान यात्रा : संस्मरण

**डॉ नमिता राकेश**
वरिष्ठ साहित्यकार एवं राजपत्रित अधिकारी

(गतांक से आगे ...) सुबह सवेरे हम सबने चाय नाश्ता किया और न्यू जलपाईगुड़ी के लिए प्रस्थान किया। बारिश जो भूटान छोड़ते समय शुरू हुई थी वो अब भी बरक़रार थी। मानो भूटान से भारतीय सीमा के पार भी हमारा साथ छोड़ने को तैयार नहीं थी। हम सब भूटान को इतना पसंद जो आ गए थे।

भारतीय सीमा पर प्रवेश करते ही हमें भारतीय रंग हर जगह दिखने लगा। यानी जगह-जगह पान की पीक के रंग जो हर सड़क, हर दीवार पर अपनी छाप छोड़े हुए थे। हमें मन ही मन बहुत ग्लानि होने लगी। मन मे रह-रह कर एक ही ख़्याल आ रहा था कि हम भारतीय स्वच्छता के प्रति जागरूक अभी तक भी क्यों नहीं हो पाए। मुझे भूटान की साफ सुथरी सड़कें याद आने लगीं। वहां की आबोहवा तो विशुद्ध है ही पर साथ ही पूरे भूटान में सड़कों या बाजारों में मजाल है कि कोई गंदगी मिल जाए। यहां तक कि कागज़ के एक टुकड़ा भी कभी दिखाई नहीं दिया।

भारत की ट्रैफिक लाइट और चिल्ल पों करते तेज़ आवाज़ में हॉर्न बजाते वाहनों को देख सुन कर भूटान की ट्रैफिक फ्री, नो लाइट-नो हॉर्न की बेमिसाल पद्यति याद आने लगी। जी हां, ठीक समझे। भूटान में कोई ट्रैफिक लाइट नहीं है। कोई वहां हॉर्न नहीं बजाता वहां। ज़ेबरा क्रॉसिंग पर यदि कोई पैदल पार कर रहा हो तो सभी वाहन अपने आप ही रुक जाते हैं। एक शालीनता है वहां हरेक चीज़ में। अगर नियम हैं तो उन नियमों का पालन करने वाले भूटानी भी हैं। अगर भूटान से तुलना करूँ तो सर ग्लानि से झुक जाए क्योंकि हमारे यहां नियम बनाने वालों से ज़्यादा नियम तोड़ने वाले हैं। देश को परे रख कर खुद पर केंद्रित लोग ज़्यादा हैं। हां, जानती हूं कि मैं अपने देश की कुछ ख़ामियां रेखांकित कर रही हूँ जो शायद नहीं करनी चाहिए पर सच्चाई से मुंह मोड़ना भी ठीक नहीं। सोचिए, जब कोई विदेशी हमारे यहां आता है तो यह एक पहलू हमारे देश की अन्य सकारात्मक पहलुओं पर भारी पड़ता होगा। आख़िर,

एक साथी के कहने पर हम सब उत्साहपूर्वक टैक्सी से पास ही स्थित बंगाल सफ़ारी देखने निकल पड़े। हम 12 लोग थे। टिकट ले कर हम सबने पहले पेट पूजा की। सफ़ारी के अंदर ही एक रेस्तरां में हमने चाउमीन, लेमन राइस और गर्मागर्म चाय का ऑर्डर किया। उफ्फ, साहब, हम यहां भी फोटो सेशनकरने से नहीं चूके । सब कुछ भक्ष कर हम सफ़ारी की बंद बस में बैठ कर सफ़ारी की सैर को चल पड़े। वाह, जो अनुभव हुआ वो बयान के बाहर है।

इतने नज़दीक से जंगली जानवरों को उनकी प्राकृतिक रिहाइश में देखना कुछ हटकर अनुभव था। पंछियों से शुरुआत हुई। फिर जैसे-जैसे हमारी गाड़ी जंगल के भीतरी हिस्से की ओर बढ़ी वैसे वैसे अन्य पशु भी दिखने शुरू हो गए। हिरन, बारहसिंगा, जिराफ़, हाथियों के झुंड पानी में अठखेलियाँ करते हुए बहुत प्यारे लग रहे थे। फिर भालू दिखे। एक के बाद एक कई भालू एक साथ। उस के बाद हमारी गाड़ी थोड़ा ही दूर गई थी कि कुछ लोगों की चीख निकल गई। बहुत से शेर एक साथ दिखे। दो शेर पानी में बैठे हुए और दो तीन एक दूसरे के साथ लड़ते हुए। हम सब इतने पास से इतने बड़े-बड़े शेरों को देख कर रोमांचित हो रहे थे। सबके मोबाइल कैमरे फ़टाफ़ट फोटो खींच रहे थे। मैं तो शेर के साथ सेल्फ़ी लेने में व्यस्त हो गई साथ मे कमेंट्री भी करती जा रही थी। बहुत मज़ा आ रहा था। वैसे मैं तो मॉरीशस के जंगल सफ़ारी की सैर भी कर चुकी थी पर बंगाल सफ़ारी भी कम रोमांचक नहीं था। शेरो के दर्शन के बाद हम सभी सेल्फी पॉइंट पर पँहुचे औऱ हर अंदाज़ में फोटो खिंचवाई गईं।

ट्रेन का समय हो चला था तो हम सब टैक्सी करके स्टेशन वापस आ गए और सामान सहित ट्रेन के डिब्बे में पँहुच गए। फिर वही डिब्बा, वही साथ, वही मिलबांट कर खाना और चाय-शाय हंसते-गाते हम सभी देर रात दिल्ली पँहुच गए। सबसे इतने दिन के साथ के बाद अलग होना जहां सबको कचोट रहा था वहीं इतने दिन बाद परिवार से मिलने की खुशी भी सबके चेहरों पर साफ़ नज़र आ रही थी।

भूटान यात्रा का आगाज़ और अंजाम इतना रोमांचक होगा यह तो उम्मीद ही नहीं थी। हम सब इस यात्रा से पूर्णरूपेण संतुष्ट थे।

# एक दिन पहाड़ उकता उठेंगे

डॉ एस पी सती
भू वैज्ञानिक पर्यावरणविद
उत्तराखंड

एक दिन आएगा जब
तुम्हारे कर्मों से उकता कर अचानक
कुदरत समेटने लगेगी अपने पहाड़
सबसे पहले नदियों को सरकायेगी खींच कर
और पहाड़ मनका-मनका बिखर
टीला-टीला अलग हो जाएंगे
फिर सरका देगी छोटी-छोटी नादिकाओं को हौले से
और टीले भंगुर होकर मिट्टी पत्थर के ढेर लग जाएंगे।
फिर धीरे से सरका देगीं वो मैदान की चादर
जो पहाड़ के नीचे से होकर
बिछी हुई है इस पार से उस पार तक
और खींच कर ढो डालेगी टीलौं के ढेर को
दक्खिन में समंदर की छाती पर
मैदान की पीठ पर उभर आएंगी गहरी खरोंचे
इस तरह पहाड़ गायब होगा जब
लहूलुहान मिलेगा मैदान
और कराहता टीलों के ढेर तले दबा समंदर
मेरे भाई ठीक उस लम्हें
तुम अट्टहास करने की चाह रख रहे होंगे
पर उस क्षण को देखने के लिए
तुम रहोगे भी???
आओ गौर करें।

# नव वर्ष

मनोज कुमार सिंह
लेखक/साहित्यकार/
उप-सम्पादक
कर्मश्री मासिक पत्रिका

**आया नववर्ष लेकर नई सुगंध स्वर्णिम नूतन बिहान**

**आंखों में उम्मीदों की चमक, हर सीने में सुमधुर गान,**
**आया नववर्ष लेकर नई सुगंध स्वर्णिम नूतन बिहान।**

**मिट जाए मन, मस्तिष्क से अविद्या ,आलस्य ,अज्ञान,**
**बंदित, अभिनंदित, पूजित हो सर्वत्र तर्क,दर्शन, ज्ञान।।**

**धूल धूसरित हो जाए धरा से, क्रोध , कलुष, अभिमान ,**
**निर्मलता हो जन जीवन में, अकिंचन का रहे सम्मान।।**

**अपने अतीत का रहे बोध,मर्यादा, मूल्यों,का रहे ध्यान ,**
**आदर्शो की सरिता से अभिसिंचित हो सारा जहान।।**

**सबके जीवन चरित्र में महके स्वावलंबन स्वाभिमान ।**
**रचना , सृजन नव चेतना से बने अपना भारत महान।।**

**बुलबुल चहकें ,कोयल कूके झुरमुट आँगन सिवान ,**
**खिलखिलाता बचपन,खुशियो से झूमे नर-नारी जवान।।**

**सदियों तक सजा रहे भारत मां का सतरंगी परिधान,**
**निर्भीक, निडर कर्तव्यनिष्ठ बने भारत का हर संतान।।**

**दुर्गम पथ पर चलने वाले राही का हो अमिट निशान ,**
**अब सबका मजहब बने अमन, शांति, सच्चाई, ईमान।।**

**आया नववर्ष लेकर नई सुगंध स्वर्णिम नूतन बिहान।।**

# फाँसी के फंदे पर झूलता अन्याय ?

युवा कवि अनिल कुमार केसरी
देई, जिला बूंदी
राजस्थान

**न्याय के चरम पर झूलते फाँसी के फंदे को,**
**पता है सच और झूठ के बीच का फासला ?**
**उसने देखा है गुनाह के पीछे का सारा सच,**
**जुर्म की हकीकत उसने आखरी साँसों तक सुनी है।**
**वह साक्षात् दृष्टा है गुनाह के अंजाम का,**
**उसकी पकड़ ने अन्याय की ताकत को परखा है ?**
**रोते हूए आखरी शब्दों में निकले बोलों की,**
**सुबकती सिसकियाँ उसके कानों से होकर गुजरी है।**
**बेरहम मौत के फैसले को घुटते आखरी दम तक,**
**उसने न्याय का चरम निर्णय सुनाते देखा है ?**
**जकड़कर रखा है उसने गुनाह के गले को ?**
**अपराध की अंतिम सिसकियों के मौन हो जाने तक।**
**न्याय और अन्याय के आखरी अखाड़े में**
**फाँसी के फंदे ने जुर्म को मौत तक पकड़ के रखा है ?**
**उसने जाने कितने गुनाहगारों को झुलाया है ?**
**कानून के फैसलों की अंतिम सजा के फंदे पर।**
**इतने गुनाह और गुनाहों पर मौत के फैसलों पर भी,**
**अपराध हर बार फाँसी पर लटकने क्यों चला आता है ?**
**मौत की हर सजा पर फाँसी का फंदा सोचता होगा,**
**अपराध का यह सिलसिला थम क्यों नहीं जाता है ?**

# बसंत ऋतु का स्वागत

अश्वनी अकल्पित
नयी दिल्ली

**एक:**
**बसंत ऋतु के आगमन पर लिखे है शब्द चार**
**दो तो ठंड से जम गए दो धूप रहे ताप**
**दो धूप रहे ताप मन में ही मनभर बोझा**
**ऐसी जमी स्याही कागज रह गया कोरा**
**कुछ लकीरें रह गयी जिनमें भाव अनंत**
**ठिठुरती इस ठंड में दस्तक दे रहा बसंत**

**दो:**
**देखो आया बसंत झूम के**
**नृत्य करत मयूर विभोर हो**
**उड़त रंग फगुवा -खिलत पुष्प पलाश के**
**कोक की कूक मनभावन**
**कहे अकल्पित सब के बसंत सुहावन**

# नाराजगी और प्यार

शायरा बानों
प्रवक्ता,
जैश किसान इन्टर कॉलेज,
बनगावां, घोसी, मऊ

आशुतोष और शबनम एक प्रेमी युगल हैं जिनके बीच बातचीत के दौरान कुछ बातों को लेकर नाराजगी चल रही थी,दोनों गुस्से में थे । एक दूसरे को फोन भी नहीं कर रहे थे लेकिन दोनों को एक दूसरे के बिना रहा भी नहीं जा रहा था । नाराजगी ने फोन पर बात करने से दोनों को रोक रखा था फिर भी आशुतोष को शिकायत करनी थी उसने फोन किया और शबनम से बोला -"मुझे ब्लाक कर दो,मेरा नम्बर डिलीट कर दो।"

शबनम -ये काम आप भी कर सकते हैं।

आशुतोष-आप करो, आपको बात नहीं करनी है।

शबनम- मुझे ब्लाक नहीं करना आप कर दीजिये आप भी कर सकते हैं।

आशुतोष-देखिये मैडम ! मैं दिखावा नहीं करता जो हूँ वो हूँ। अच्छा नहीं हूँ, खराब हूँ । मुझे ब्लाक कर दीजिये हर जगह से (फेसबुक, व्हाट्सप,टेलीग्राम)

शबनम(आँखों में आंसू लिये) -आप नहीं मैं खराब हूँ,मेरी तो झोली ही फटी है, मुझे थोड़ा सा भी प्यार मिलता है न तो मेरी झोली में टिकता ही नहीं।

आशुतोष -नहीं, मैं ही ख़राब हूँ, इसमें आपकी गलती नहीं है। मै ऐसा ही हूं क्या करूँ?फोन रखिये मुझे कोई बात नही करनी ।

इतना कह आशुतोष ने फोन काट दिया । फोन कट होते ही शबनम जड़त्व हो गयी उसकी आँखों से आंसू जारोकतारा बह रहे थे।कुछ देर तक शबनम के आंसू यूँही बहते रहे । कुछ देर बाद शबनम खुद को समझाकर शांत तो हो गयी पर नाराजगी बरकरार थी।रात के आठ बजे आशुतोष का मैसेज आता है।

आशुतोष -मेरा एक्सीडेंट हो गया है।

शबनम की नाराजगी फुर्र हो गयी और उसने तपाक से एक साँस में पूछा -"कैसे?क्या हो गया? चोट ज्यादा तो नहीं आयी?

आशुतोष - हाथ और पैर में चोट लगी है।

ये बात सुनकर शबनम के दिल पर मानो किसी ने खंजर घोंप दिया। किसी तरह रात बीती, सुबह हुई, शबनम ने आशुतोष को फोन किया "अब चोट कैसी है?"

आशुतोष-जितना दर्द इस चोट से हो रहा है ना उससे ज्यादा दर्द दिल में है, ये दर्द तो कुछ भी नहीं।

ये बात सुनते ही शबनम का मानो कलेजा मुंह को आ गया, अब शबनम से बिल्कुल भी रहा नही जा रहा था । शबनम ने आशुतोष के दफ्तर की ओर रुख किया और चल पड़ी, रास्ते में जाते वक्त शबनम के दिमाग में आशुतोष ही आशुतोष था।

वह दफ्तर में दाखिल हुई, उसकी निगाहों को आशुतोष की तलाश थी । उसने चारों ओर निगाहें दौड़ाई आखिर उसकी निगाह आशुतोष पर पड़ ही गयी, आशुतोष पर निगाहें ऐसे टिकी थी जैसे एक माँ अपने बिछड़े बच्चे के मिलने पर बिना पलकें झपकाये लगातार देखती है अब उसके आंसू सैलाब बनकर उमड़ जाना चाहते थे लेकिन सार्वजनिक जगह होने की वजह से शबनम आंसुओं के घुट पी गयी। काम में व्यस्त आशुतोष की नजर भी अचानक से शबनम पर गयी, शायद उसे उम्मीद नही थी कि शबनम दफ्तर भी आ सकती है । वह आश्चर्य भरी निगाहों से शबनम को देख रहा था जैसे ही दोनों की नजरें मिली पास रखी कुर्सियों में से एक कुर्सी पर शबनम जा बैठी और आंसुओ को रोकते हुए मोबाइल चलाने का दिखावा करने लगी ।

वह अचानक से उठी और बिन बोले चल दी। आशुतोष ये सब देख रहता था, जाते देख बोला "ओय मैडम रुकिए" शबनम पास गई आशुतोष ने कुछ कहना चाहा ।

शबनम बोली" किसी और दिन" और रुंधे गले तेजी से बाहर निकल आयी। शबनम गेट से इतनी तेजी से बाहर निकली थी कि उसका हाथ गेट से टकरा गया।

अब शबनम दफ्तर से कुछ मीटर की दुरी पर सड़क पर जा पहुंची थी और उसकी आंखें अश्रु से भरी थी, आटो को हाथ दिखाया ऑटो पास आकर रुकी जिसमे बैठकर शबनम घर की तरफ रवाना हो गयी ऑटो अभी चली ही थी कि आशुतोष ने फोन किया और बोला, "दिल में बहुत दर्द हो रहा है इतना तो कोई गोली मार दे तो न हो।"

इस तरह की कुछ चन्द बातें दोनों में हुईं फिर शबनम ने कहा आवाज़ नहीं आ रही बाद में बात करते हैं। फिर अगले दिन दोनों ने फोन पर बात की ।

आशुतोष बोला, "मुझे उम्मीद नहीं थी कि आप दफ्तर आ जाएंगी।"

शबनम बिना कुछ बोले मुस्कुराई, कुछ बातें होने के बाद दोनों की नाराजगी जाती रही और कुछ देर बाद दोनों बात करते-करते खिलखिलाने लगे ।

इस नाराजगी का सुखद अंत हुआ।